27 यक्षगान : सम्मोहक एवं मुक्तिदायक !



इनी पेरिओडी

मेरे बचपन की प्यारी यादों में से एक बहुत प्यारी याद है रात भर चलने वाले यक्षगान[1] के प्रदर्शन में जाने की तैयारी करना। उन दिनों यक्षगान प्रदर्शन की प्रतीक्षा करने से बेहतर कोई और काम नहीं था। उससे सम्बन्धित हर बात किसी उत्सव से कम नहीं थी। फिर चाहे वह वहाँ जाने की प्रतीक्षा हो, कलाकारों को चौकी[2] में तैयार होते हुए देखकर दंग रह जाना हो और या उस चमत्कारपूर्ण दुनिया में खो जाना हो। मैं मंत्रमुग्ध होकर पूरे प्रदर्शन को देखती और यह दुआ करती कि ये रात कभी खत्म न हो। कई बार तो मैं प्रदर्शन के समाप्त होने के बाद रो भी पड़ती क्योंकि मैं ऐसी वास्तविकता में लौटना ही नहीं चाहती थी जो यक्षगान की तुलना में बेहद उबाऊ और सादी थी।

एक कला के रूप में यक्षगान ने मेरे जीवन के विभिन्न चरणों में विभिन्न भूमिकाएँ निभाई हैं। एक बच्ची के रूप में इसने मेरे सामने एक नई दुनिया खोलकर रख दी, ऐसी दुनिया जिसमें रंग, बहुमूल्यता, पात्र और भावनाएँ थीं। जब मैं एकलव्य प्रसंग[3] देखती तो दुनिया में होने वाले अन्याय को देखकर रोती रहती। मैं भाग्यशाली थी क्योंकि मेरे घर का वातावरण ऐसा था जहाँ मैं अपनी देखी हुई और महसूस की हुई बातों पर चर्चा कर सकती थी। इन कहानियों ने मेरे अन्दर अनेक प्रश्न उठाए, मुझे सोचने पर मजबूर किया। जीवन के पहलुओं और मुद्दों के बारे में मासूमियत से विस्मित होने और सोच–विचार करने का मौका दिया। मेरी माँ मेरे प्रश्नों का उत्तर देने के साथ–साथ और अधिक प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित भी करती रहती थीं। मैं बड़ी गम्भीरता से माँ से पूछती, "अम्मा, अगर राम अच्छे व्यक्ति थे तो उन्होंने शूर्पणखा के साथ बुरा व्यवहार क्यों किया और सीता को जंगल में क्यों भेजा? तो फिर राम और रावण में अन्तर क्या है?" हम इस बारे में बात करते कि किसी भी व्यक्ति के लिए हमेशा अच्छा या बुरा बने रहना असम्भव है। फिर हम जिस बात पर चर्चा करते उसे आज मैं व्यक्तित्व के रंग कहती हूँ या फिर हम बहुत बुनियादी स्तर पर मानवीय इच्छाओं और द्वन्द्व के बारे में वार्तालाप करते।

मेरी माँ गाँव में एक सांस्कृतिक संगठन शुरू करने वाली थीं जिसमें सप्ताह में एक बार यक्षगान की कक्षाएँ चलाई जानी थीं। जिस चीज को मैं अब तक दूर से देखती थी उसे करीब से देखने का सुअवसर मुझे मिलने वाला था। मैं पहली कक्षा में गई और फिर पलटकर नहीं देखा। इस प्रकार यक्षगान के साथ मेरी नई यात्रा प्रारम्भ हुई।

अपनी किशोरावस्था के प्रारम्भिक वर्षों के दौरान यक्षगान ने मेरे जीवन में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। वैसे तो मैं जिस वातावरण में रहती थी उसमें युवावस्था की ओर बढ़ना शर्मनाक नहीं माना जाता था, फिर भी मैं अपने शरीर और रूप–रंग को लेकर बहुत बेचैनी महसूस करने लगी थी। मैं शारीरिक रूप से अधिकाधिक सचेत होती जा रही थी। मैं यक्षगान की बहुत आभारी हूँ कि उसने मुझे स्वतंत्रता की भावना दी। जैसे–जैसे मैंने यक्षगान में प्रगति की वैसे–वैसे मेरा शरीर और मेरे व्यक्तित्व के कुछ पहलू जैसे स्वतंत्र होते गए। अब मैं सिर उठाकर सीधी खड़ी रह सकती थी और अपने शरीर या बदलते रूप को सहज रूप से लेने में सक्षम हो गई थी। यक्षगान की बुनियादी मुद्रा ही ऐसी थी जिसमें आत्मविश्वास, मुक्त भावना और आत्मदृढ़ता की जरूरत पड़ती थी। अगर सच में कला के इस रूप को सीखना हो तो यह आवश्यक था कि अन्य सभी शारीरिक प्रतिबन्धों को छोड़ दिया जाए। यह विडम्बना ही तो है कि कला के जिस रूप को पूर्णत: पुरुष–प्रधान माना जाता है (आज भी विरले ही महिलाओं को इस कला का प्रदर्शन करते हुए देखा जाता है।) उसका हम लड़कियों पर ऐसा प्रभाव हो। व्यक्तिगत रूप से मुझे यक्षगान सीखने का यह

अनुभव मुक्तिदायक लगा और मुझे यकीन है मेरे साथ सीखने वाली दूसरी लड़कियों को भी ऐसा ही लगा होगा।

हमारे समूह में कोई सशक्त कलाकार राक्षस की भूमिका निभाता है। ऐसा माना जाता था कि महिलाएँ इस भूमिका के साथ न्याय नहीं कर सकतीं क्योंकि इसके लिए नियत वेशभूषा ही बहुत भारी होती है। आज भी हम उस घटना को याद करके मुस्कुराने लगते हैं कि जब एक लम्बे परिचयात्मक नृत्य के बाद एक महिला की आवाज सुनकर दर्शक आश्चर्यचकित हो गए थे। "हे भगवान, ये तो एक महिला है!" सबके मुँह से यही निकला। पर दूसरी ओर यह देखते हुए बुरा लग रहा था कि अनेक प्रतिभाशाली कलाकारों ने नृत्य सीखना सिर्फ इसलिए बन्द कर दिया क्योंकि वे लड़कियाँ थीं। उनका परिवार उन्हें ऐसा करने के लिए मजबूर करता और हम बहुत खिन्न हो जाते। अन्य कलाओं की तरह ही इसमें भी प्रतिभा, कठोर परिश्रम और रुचि का सही मेल मिल पाना कठिन है।

अगर यक्षगान का प्रदर्शन देखना मंत्रमुग्ध करने वाला था तो इसे करना सम्मोहक था। प्रदर्शन के लिए तैयार होना, अभ्यास करना, जटिल मेकअप करना या भारी वेशभूषा पहनना, मंच पर जाना, खुद को खो जाने देना और अन्त में, प्रदर्शन के बाद या तो बहुत अच्छा या उतना अच्छा न महसूस करना–ये सभी बातें बहुत रोमांचकारी थीं। मैंने सफलता को संजोना, विफलता को स्वीकारना और फीडबैक का भली–प्रकार से स्वागत करना सीखा।

यक्षगान मण्डली का हिस्सा होने के नाते मैंने टीमवर्क की अवधारणा को एक बहुत ही व्यावहारिक स्तर पर समझा। जैसा कि मेरे प्रिय यक्षगान कलाकार ने समझाया, "अगर कृष्ण को एक रक्षक के रूप में प्रदर्शित करना है तो द्रौपदी को उनके साथ एक विशेष रूप में जुड़कर कृष्ण के उन गुणों को उजागर करना होगा जिनके कारण वे रक्षक बनते हैं।" आप मंच पर कहाँ खड़े होते हैं, अन्य चरित्र के सामने कैसे अपने को प्रस्तुत करते हैं, कैसे नाचते हैं, कैसे बोलते हैं और किन शब्दों का प्रयोग करते हैं....इन सबका तालमेल उस चरित्र के साथ होना चाहिए जिसे आप मंच पर अभिनीत कर रहे हैं और सामने वाले जिस दूसरे चरित्र के साथ आप जुड़ रहे हैं। ऐसे में कुछ भी व्यक्तिगत नहीं रह जाता। आप केवल एक बड़ी तस्वीर का छोटा हिस्सा बन जाते हैं जिसे आप अन्य लोगों के साथ दर्शकों के सामने प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहे होते हैं और यही वह परिज्ञान है जो हम सबको विनम्र बनाता है।



मेरी यक्षगान यात्रा हमेशा आसान नहीं रही। सबसे बड़ी चुनौती तब आती जब मुझे कोई ऐसी लाइन बोलनी पड़ती या कोई ऐसा सन्देश देना पड़ता जो मेरी मान्यताओं विरुद्ध होता या मुझे किसी ऐसी कहानी में भाग लेना पड़ता जिसका मैं उतना सम्मान नहीं करती थी। मैंने स्वयं से कई बार यह सवाल किया है कि मैं तुलसी–जलन्धर नामक प्रसंग का हिस्सा क्यों बनी जिसमें महिलाओं के नैतिक गुणों एवं शुचिता के बारे में जिस तरह से बात की गई थी उसने मेरी नस–नस को असहज बनाकर रख दिया। ऐसी स्थिति में मुझे क्या करना चाहिए था? क्या अपनी प्रिय कला के प्रति समर्पित रहना ज्यादा जरूरी था? या उसे सिर्फ इसलिए छोड़ देना चाहिए क्योंकि उसकी कुछ बातें आपकी मान्यताओं और विश्वास के विरुद्ध हैं? या क्या हमारे पास इस बात की स्वतंत्रता थी कि हम इस कला के ढाँचे के भीतर रहकर उन पहलुओं को छोड़ देते जिनसे हम सन्तुष्ट नहीं थे? ये कुछ ऐसे प्रश्न थे जिनका सामना हमने एक टीम के रूप में किया।

मैं स्वयं को धार्मिक या किसी जाति का हिस्सा नहीं कहती। तो फिर मैं यह क्या कर रही थी–ऐसी कहानियों और महाकाव्यों के अंशों का अभिनय जो एक धर्म विशेष के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थे? मुझे इन प्रश्नों के उत्तर खुद ही खोजने थे। मेरे कोर्स में एक पेपर का नाम था 'कला में परिप्रेक्ष्य' । इसे पढ़ते–पढ़ते मेरे ऐसे कई विचार समेकित

हुए। इसने मुझे उन प्रश्नों पर पुन: सोचने का मौका दिया जिनके उत्तर या तो आंशिक रूप से मिले थे या अस्पष्ट रूप से। मेरे शिक्षक ने बड़ी खूबसूरती से समझाया कि कैसे एक सच्चा कलाकार इन कहानियों को ऐसी सार्वभौमिक मानवीय भावनाएँ मानता है जिसके साथ हर कोई जुड़ सकता है और वह यह प्रयास करता है कि जो कोई भी उन्हें देख रहा है उसके लिए ये सुगम्य हो जाएँ।

ऐसे कुछ और प्रश्न भी थे जिनके उत्तर हमें खोजने थे और हमने उन पर मिलकर विचार किया। कभी–कभी हमारा भाग्य अच्छा होता तो हमें विद्वानों की संगति में विचार–विमर्श करने का अवसर मिलता। जब बात बच्चों के इस कला में भाग लेने की हो तो क्या इसमें किन्हीं सुधारों की आवश्यकता है? किस प्रकार की कहानियाँ बच्चों द्वारा आनन्द उठाने के लिए उपयुक्त होंगी? क्या प्रयोग करना ठीक होगा या फिर इस कला के कठोर नियमों का पालन करने की तीव्र आवश्यकता है जिससे कि इसकी सुन्दरता बनी रहे? इनमें से किसी भी प्रश्न या सन्देह ने मुझे कला के इस रूप से दूर नहीं किया; वास्तव में इन्होंने इस बन्धन को और मजबूत किया।

कुछ मण्डलियाँ ऐसी हैं जो इस कला का उपयोग मुख्य रूप से अपनी धार्मिक मान्यताओं और संस्कृति का प्रचार करने और जीने के एक विशेष तरीके को लोगों पर थोपने के लिए करती हैं। यह दुर्भाग्य की बात है कि लोग इस कला का सम्बन्ध सिर्फ धर्म से जोड़ते हैं। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो इस कला के प्रति समर्पित रहते हैं और इसे अपना जीवन बना लेते हैं। मैं व्यक्तिगत रूप से इससे बड़े सपने या अपेक्षाएँ नहीं रखती; मैं तो बस इसके साथ जुड़े रहने की उम्मीद रखती हूँ और चाहती हूँ कि सीखना, सोचना जारी रखूँ और इन अद्भुत अनुभवों को प्राप्त करती रहूँ।

यक्षगान में किसी भी अन्य कला की तरह बहुत अधिक सम्भावनाएँ हैं। अगर आप इसके साथ स्वस्थ सम्बन्ध विकसित कर लें तो यह व्यक्ति की शारीरिक और मनोवैज्ञानिक दोनों की भलाई में योगदान दे सकती है। एक टीम के रूप में सीखने और नई चीजें करने के माध्यम से हमने इसके साथ अपने सम्बन्ध का लगातार उपयोग किया है। हमने एक टीम के रूप में एक नया प्रसंग तैयार किया है जिसका शीर्षक है 'मधुर माणिक्य' और इसके द्वारा हमने यक्षगान में लिंग सम्बन्धी एक नए परिप्रेक्ष्य को शुरू किया है। यह लिंग–भेदभाव के प्रश्न को उठाता है और रूढ़िवादिता को बहुत सरल तरीके से तोड़ता है। हमने यक्षगान के कुछ अत्यन्त प्रसिद्ध कलाकारों के साथ इसकी कहानी पर पूरे हफ्ते काम किया और फिर मैंगलोर के पास एक छोटे से शहर के एक मन्दिर में इस 'महिला उन्मुख थीम' का प्रदर्शन किया। मन में इस बात को लेकर घबराहट थी कि पता नहीं दर्शकों की प्रतिक्रिया कैसी होगी।

और जब दर्शक कार्यक्रम के अन्त तक बैठे रहे तो हम जान गए कि हम सही रास्ते पर थे!

’kCnkFk %

1. यक्षगान: नृत्य, नाटक, संगीत, बहुत परिश्रम से तैयार की गई वेशभूषा और मेकअप, आशु संवाद और रामायण और महाभारत के उपाख्यानों को लेकर चलने वाला तटीय कर्नाटक का एक जीवन्त लोक कला का रूप।
2. चौकी: यक्षगान की नेपथ्य शाला (ग्रीन रूम)
3. प्रसंग: यक्षगान में प्रदर्शित किए जाने वाले उपाख्यान या कहानियाँ।

__इनी पेरिओडी__ ने 2011 में सेंटर फॉर लर्निंग से ए–लेवल्स पूरा किया है। सम्प्रति वे माउण्ट कार्मेल कॉलेज, बंगलौर से कम्यूनिकेशन स्टडीज में बी.ए. कर रही हैं। वे अपने को विविध अभिरुचियों में व्यस्त रखना पसन्द करती हैं जैसे भाषा, स्थानीय परम्पराएँ एवं संस्कृति। उन्हें बच्चों के साथ काम करने, प्रकृति के निकट रहने और किसी न किसी रूप में प्रदर्शन कलाओं के साथ निरन्तर जुड़े रहने में आनन्द मिलता है। उनसे uvperiodi@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। __अनुवाद:__ नलिनी रावल